[2023] 4 एससीआर 361

भीमाशंकर सहकारी साकरे कारखाने
नियमिता

बनाम

वालचंदनगर इंडस्ट्रीज लिमिटेड (डब्ल्यूआईएल)

(सिविल अपील सं. 6810/2022)

अप्रैल 10, 2023

[न्या. एम.आर. शाह और न्या. कृष्ण मुरारी]

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996- धारा 34(3) - परिसीमा अधिनियम, 1963- धा. 2(ञ) सहपठित धा.4 – "परिसीमा अवधि"- सामान्य खंड अधिनियम, 1897- धा.10- धारा 34(3)के तहत आवेदन – 120 दिनों की समाप्ति के बाद, लेकिन शीतकालीन/क्रिसमस के अवकाश के बाद फिर से खुलने के पहले दिन दायर किया गया- धारा 34(3) के तहत 30 दिनों की माफ करने योग्य अवधि का अंतिम दिन उक्त अवकाश के दौरान आया– धारा 4 का लाभ, परिसीमा अधिनियम, यदि उपलब्ध हो – अभिनिर्धारित किया गया- नहीं - मुद्दा अनिर्णीत नहीं है – असम शहरी जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड बनाम सुभाष प्रोजेक्ट्स एंड मार्केटिंग लिमिटेड [2012] 1 एससीआर 403 के रूप में प्रकाशित में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब न्यायलय बंद है उस अवधि को नहीं जोड़े जाने का लाभ तब उपलब्ध है जब अधिनिर्णय को अपास्त करने हेतु आवेदन 'निर्धारित परिसीमा की अवधि' के अंदर दायर किया जाता है और यह न्यायलय द्वारा अपने विवेकाधिकार पर बढ़ाये जाने वाली अवधि हेतु उपलब्ध नहीं है- आगे अपीलकर्ता का सामान्य खंड अधिनियम की धारा 10 के लागु होने पर किया गया प्रतिविरोध सामान्य खंड अधिनियम की धारा 10 के परंतुक के आलोक में असमर्थनीय है। उच्च न्यायालय और

विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन को दायर करने में हुए विलम्ब को क्षमा करने से इनकार करने में कोई चूक नहीं की गई है।

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 - धारा 43(1) - अपीलकर्ता का अभिवचन कि मध्यस्थता अधिनियम के तहत कार्यवाही पर परिसीमा अधिनियम लागू नहीं होन चाहिए -अभिनिर्धारित किया गया कि: कोई सार नहीं है - धारा 43(1) में विशेष रूप से प्रावधान किया गया है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 मध्यस्थताओं पर लागू होगा जैसा कि परिसीमा अधिनियम, 1963 इस न्यायालय की कार्यवाहियों पर लागू होता है।

याचिका खारिज करते हुए न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1 मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) और परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 2(ञ) और 4 *असम शहरी के मामले में इस न्यायालय* के समक्ष पहले विचार की गई थी| यहां तक कि उठाया गया मुद्दा भी वर्तमान अपील में असम शहरी के मामले में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए गिर गया। उपरोक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने उपरोक्त प्रावधानों की व्याख्या की और विशेष रूप से यह कहा और अभिनिर्धारित किया कि जिस अवधि के दौरान न्यायालय बंद है, उसके बहिष्करण का लाभ केवल तभी उपलब्ध है जब पुरस्कार को रद्द करने के लिए आवेदन 'परिसीमा की निर्धारित अवधि' के भीतर दायर किया जाता है और यह उस अवधि के संबंध में उपलब्ध नहीं है जिसे न्यायालय अपने विवेक का प्रयोग करते हुए बढ़ा सकता है। इसलिए, वर्तमान अपील में शामिल प्रश्न का उत्तर अपीलकर्ता के खिलाफ स्पष्ट रूप से दिया जाता है और उक्त मुद्दा एकीकृत नहीं है।[पैरा 7.1] [377-बी-डी; 380-ए]

असम शहरी जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड बनाम सुभाष प्रोजेक्ट्स एंड मार्केटिंग लिमिटेड (2012) 2 एससीसी

624 : [2012] 1 एससीआर 403 - निर्भर।

1.2 अब, जहाँ तक अपीलकर्ता की ओर से यह निवेदन कि मध्यस्थता अधिनियम के तहत कार्यवाही पर परिसीमा अधिनियम लागू नहीं होगा, उपरोक्त में कोई सार नहीं है। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 43(1) में विशेष रूप से प्रावधान किया गया है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 मध्यस्थता पर लागू होगा जैसा कि यह न्यायालय में कार्यवाही पर लागू होता है। हालाँकि, जैसा कि असम शहरी, परिसीमा अधिनियम, 1963 के मामले में इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया गया है, 1996 के अधिनियम के अंतर्गत आने वाले मध्यस्थता के मामलों पर लागू होगा, सिवाय इसके कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) में निहित स्पष्ट प्रावधान के आधार पर इसकी प्रयोज्यता को इस हद तक बाहर रखा गया है। [पैरा 8] [380-घ-ङ]

1.3 अब, जहाँ तक अपीलकर्ता की ओर से सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 पर निर्भरता का संबंध है, शुरुआत में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ऐसा विवाद सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के परंतुक के आलोक में असमर्थनीय है, जो विशेष रूप से सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को किसी भी अधिनियम या कार्यवाही पर लागू करने से बाहर करता है जिस पर भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1877 लागू होता है। 1877 के अधिनियम के संदर्भ को अब सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 8 को देखते हुए परिसीमा अधिनियम, 1963 के संदर्भ के रूप में पढ़ना होगा। इसलिए, मध्यस्थता अधिनियम के तहत कार्यवाही के लिए परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुप्रयोग के आलोक में और जब सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 विशेष रूप से किसी भी अधिनियम या कार्यवाही के लिए धारा 10 की प्रयोज्यता को बाहर करती है, जिस पर भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1963 लागू होता है और परिसीमा अधिनियम की धारा 4 के साथ पठित धारा 2(ञ) के तहत परिभाषित परिसीमा की अवधि की परिभाषा के आलोक में और जैसा कि असम शहरी मामले में इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया गया है, उस अवधि के बहिष्करण का लाभ तब उपलब्ध होगा जब न्यायालय बंद है, जब अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन परिसीमा

की निर्धारित अवधि के भीतर दायर किया जाता है और न्यायालय द्वारा अपने विवेक का प्रयोग करते हुए विस्तारित अवधि के संबंध में उपलब्ध नहीं होगा। [पैरा 9] [380-छ-ज; 381-क-ग]

हुडा और अन्य बनाम डॉ. बाबेश्वर कन्हार और अन्य (2005) 1 एससीसी 191 : [2004] 6 पूरक. एससीआर 282; *मनोहर जोशी बनाम नितिन भाऊराव पाटिल और अन्य* (1996) 1 एससीसी 169 : [1995] 6 पूरक. एससीआर 421; *सगुफा अहमद और अन्य बनाम अपर असम पॉलीवुड प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य* (2021) 2 एससीसी 317; *भारत संघ बनाम लोकप्रिय निर्माण कंपनी* (2001) 8 एससीसी 470 : [2001] 3 पूरक. एससीआर 619; *महाराष्ट्र राज्य बनाम बोरसे ब्रदर्स इंजीनियर्स एंड कॉन्ट्रैक्टर्स प्राइवेट लिमिटेड* (2021) 6 एससीसी 460; *समेकित अभियांत्रिकी उद्यम बनाम प्रधान सचिवअन्य सिंचाई विभाग और अन्य* (2008) 7 एससीसी 169 : [2008] 5 एससीआर 1108; *महाराष्ट्र राज्य बनाम हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड* (2010) 4 एससीसी 518 : [2010] 4 एससीआर 46; *श्रीदेवी दतला बनाम भारत संघ* (2021) 5 एससीसी 321-*संदर्भित।*

<u>निर्णयज विधि संदर्भ</u>

[2012] 1 एससीआर 403	निर्भर	अनुच्छेद 4.4
[2004] 6 पूरक. एससीआर 282	संदर्भित	अनुच्छेद 4.11
[1995] 6 पूरक. एससीआर 421	संदर्भित	अनुच्छेद 4.11
[2001] 3 पूरक. एससीआर 619	संदर्भित	अनुच्छेद 5.2
[2008] 5 एससीआर 1108	संदर्भित	अनुच्छेद 5.11
[2010] 4 एससीआर 46	संदर्भित	अनुच्छेद 7.1

सिविल अपीलीय अधिकारिकता: सिविल अपीलीय सं 6810/2022

वि.प्र.अ. सं. 201018/2018 में कलबुर्गी में कर्नाटक उच्च न्यायालय के दिनांकित 23.02.2022 के निर्णय और आदेश द्वारा।

श्री श्याम दीवान, सुश्री अनीथा शेनॉय, वरिष्ठ अधिवक्तागण, सुश्री सृष्टि अग्निहोत्री, सुश्री सुगंधा यादव, सुश्री संजना ग्रेस थॉमस, सुश्री आरती क्रूपा कुमार, सुश्री आयुष्मा अवस्थी, सुश्री नम्रता केलब, सुश्री मंतिका वोहरा, अपीलकर्ता के लिए अधिवक्तागण।

ध्रुव मेहता, वरिष्ठ अधिवक्ता, प्रदीप नायक, सुश्री प्रिथा श्रीकुमार, संकीर्थ विट्ठल, कीथ वर्गीज, सुश्री मानसी बिंजराज्का, प्रत्यर्थी के लिए अधिवक्तागण।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

न्या., एम.आर. शाह

1. कर्नाटक उच्च न्यायालय, कलबुर्गी द्वारा विविध प्रथम अपील सं. 201018/2018 में पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश दिनांकित 23.02.2022 से व्यथित और असंतुष्ट महसूस किया जिसके द्वारा माननीय उच्च न्यायालय ने उक्त अपील को खारिज कर दिया और विद्वान अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश III, विजयपुर (इसके बाद "विचारण न्यायालय" के रूप में संदर्भित) द्वारा पारित दिनांक 02.04.2018 के आदेश की पुष्टि की है जिसके द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (इसके बाद "मध्यस्थता अधिनियम" के रूप में संदर्भित) की धारा 34 के तहत आवेदन को दायर करने में हुए विलंब की क्षमा के लिए आवेदन को खारिज किया गया था, मूल आवेदक ने वर्तमान अपील को दायर किया है।

2. वर्तमान अपील को दायर करने की ओर ले जाने वाले संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार है:-

2.1. कि दिनांक 24.08.2016 पर मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों के तहत अपीलार्थी के विरुद्ध एक माध्यस्थम अधिनिर्णय पारित किया गया था। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के अनुसार,

माध्यस्थम अधिनिर्णय के विरुद्ध मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन को दायर करने के लिए 90 दिन की अवधि निर्धारित की गई है। हालांकि, अधिनियम, 2016 की धारा 34(3) के प्रावधान के संदर्भ में उक्त अवधि को 30 दिनों की अवधि के लिए और बढ़ाया जा सकता था। वर्तमान मामले में, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित 90 दिनों की अवधि दिनांक 24.11.2016 पर समाप्त हो गई थी। अपीलार्थी धारा 34(3) के परंतुक के संदर्भ में दिनांक 23.11.2016 से 30 दिनों की और विस्तारित अवधि का हकदार था जो दिनांक 24.12.2016 तक थी।

2.2 विचारण न्यायालय शीतकालीन/क्रिसमस के अवकाश के कारण दिनांक 19.12.2016 से 01.01.2017 तक बंद थीं। हालाँकि, ऐसा हुआ कि धारा 34(3) के परंतुक अपेक्षित अनुसार 30 दिनों के विस्तार योग्य/क्षम्य अवधि दिनांक 24.12.2016 को समाप्त हो गई थी जिस दिन विचारण न्यायालय को शीतकालीन/क्रिसमस के अवकाश के कारण बंद कर दिया गया था। अपीलार्थी ने यहाँ पर मध्यस्थ अधिकरण द्वारा पारित निर्णय को चुनौती देते हुए मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन दायर किया। अपीलार्थी ने विलंब की क्षमा के लिए अंतरवर्ती आवेदन सं. 1 भी दायर किया। दोनों, धारा 34 के आवेदन के साथ-साथ विलंब की क्षमा के लिए आवेदन दुबारा खुलने के दिन यानी दिनांक 02.01.2017 पर दायर किया गया था। चूंकि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत प्रदान की गई निर्धारित अवधि के साथ-साथ 30 दिनों की क्षम्य अवधि से परे था इसलिए विद्वान विचारण न्यायालय ने अंतरवर्ती आवेदन सं. 1 को खारिज कर दिया और यह कहते हुए विलंब को क्षमा करने से इनकार कर दिया कि 120 दिनों से अधिक की अवधि मध्यस्थता अधिनियम के तहत क्षम्य नहीं है चूँकि धारा 34 के तहत आवेदन को प्राथमिकता देने के लिए प्रदान की गई अधिकतम अवधि 120 दिन की है। इस स्तर पर यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि अंतरवर्ती आवेदन सं. 1 के समर्थन में दायर उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा दायर शपथ-पत्र में अपीलार्थी ने स्वीकार किया कि उसे

दिनांक 24.08.2016 पर अधिनिर्णय की प्रति प्राप्त हुई है। हालाँकि, अपीलार्थी के अनुसार, उक्त अधिनिर्णय खो गया था और उसके बाद दिनांक 29.12.2016 पर एक नई प्रति प्राप्त की गई। विद्वान विचारण न्यायालय ने कहा कि मामले के उस दृष्टिकोण में परिसीमा की अवधि दिनांक 24.08.2016 से शुरू होगी और 24.08.2016 से 120 दिनों की गणना की जानी है।

2.3 मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन को दौर करने में हुए विलम्ब को क्षमा करने से इनकार करने वाली विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, अपीलार्थी ने यहां उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की है।

2.4 उच्च न्यायालय के समक्ष, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 और साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को लागू किया गया था। आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने उक्त अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 4 में दिखाई देने वाली "निर्धारित अवधि" का अर्थ परिसीमा की अवधि के अलावा कुछ भी और नहीं माना जा सकता है और इसलिए, निर्धारित अवधि से परे की कोई भी अवधि जिसके दौरान न्यायालय या अधिकरण को किसी व्यक्ति को कार्यवाही शुरू करने की अनुमति देने का विवेकाधिकार है को "निर्धारित अवधि" नहीं माना जा सकता है।

2.5 उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए मूल आवेदक ने वर्तमान अपील को दायर किया है।

3. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्याम दीवान अपीलार्थी की ओर से पेश हुए हैं और विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ध्रुव मेहता प्रतियोगी प्रत्यर्थी की ओर से पेश हुए हैं।

4. विद्वान अधिवक्ता श्री श्याम दीवान ने प्रस्तुत किया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) निर्दिष्ट करती है कि धारा 34 के

तहत मध्यस्थम अधिनिर्णय को अपास्त करने के लिए आवेदन दायर करने की परिसीमा अवधि उस तारीख से तीन महीने की है जिस दिन आवेदन करने वाले पक्षकार को अधिनिर्णय प्राप्त हुआ है। हालाँकि, यदि न्यायालय संतुष्ट है कि आवेदक को तीन महीने की उक्त अवधि के भीतर आवेदन करने से पर्याप्त कारण से रोका गया था, तो धारा का परंतुक *30 दिनों की और अवधि* निर्दिष्ट करता है जिसके भीतर धारा 34 के तहत आवेदन दायर/विचार किया जा सकता है।

4.1 यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान याचिका में केंद्रीय प्रश्न यह है कि क्या जब 30 दिनों की क्षम्य अवधि का अंतिम दिन छुट्टी के दिन पर या न्यायालय के अवकाश के दौरान आता है तब क्या साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का लाभ अपीलार्थी को उपलब्ध होगा?

4.2 यह प्रस्तुत किया जाता है कि दूसरे शब्दों में, क्या याचिकाकर्ता-अपीलार्थी अगली तारीख को जब न्यायालय फिर से खुलता है तब आवेदन दायर कर सकते है जो इस तय किए गए सिद्धांत के अनुरूप है कि कानून किसी व्यक्ति को असंभव कार्य करने के लिए मजबूर नहीं करता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता-अपीलार्थी ने उसी दिन धारा 34 के तहत आवेदन दायर किया था जब न्यायालय फिर से खुली थी।

4.3 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्याम दीवान द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि ऐसी परिस्थितियों में अपीलार्थी को साधारण खंड अधिनियम की धारा 10 का लाभ नहीं देने से एक विसंगतिपूर्ण स्थिति पैदा हो जाती है जिसमें कुछ व्यक्तियों के लिए वैधानिक रूप से निर्धारित क्षमा योग्य अवधि का लाभ छुट्टी या न्यायालय के अवकाश के हस्तक्षेप के कारण कम हो जाता है जबकि न्यायालय के अवकाश के हस्तक्षेप की परिस्थिति के कारण अन्य व्यक्तियों के लिए पूरी तरह से उपलब्ध होता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह विचाराधीन प्रावधान के अनुप्रयोग में अनिश्चितता और अप्रत्याशितता पैदा करता है।

4.4 यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान मामला एक विसंगत स्थिति को दर्शाता है जहां परिसीमा अधिनियम की धारा 4 जो केवल परिसीमा अधिनियम के तहत निर्धारित परिसीमा की अवधि से संबंधित है और जहाँ तक वैधानिक क्षम्य अवधि का संबंध है यह एक रिक्त स्थान बनाती है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि (2012) 2 **एससीसी** 624 में प्रकाशित **असम शहरी जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड बनाम सुभाष प्रोजेक्ट्स एंड मार्केटिंग लिमिटेड** के मामले में निर्णय इस बात को ध्यान में रखने में विफल रहा है कि ऐसी वैधानिक क्षम्य अवधियों के मामले में, साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 जो इसके अर्थ और प्रयोज्यता में बहुत व्यापक है और उसी कानूनी सिद्धांत का प्रतीक है जो रिक्तता को भरने के लिए आवश्यक रूप से कदम होना चाहिए।

4.5 यह प्रस्तुत किया जाता है कि आक्षेपित निर्णय और आदेश पारित करते समय उच्च न्यायालय ने **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर बहुत अधिक भरोसा किया है जबकि यह अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 में निर्दिष्ट "निर्धारित अवधि" में केवल परिसीमा अवधि शामिल है, न कि 30-दिवसीय क्षमा योग्य/अनुग्रह अवधि। यह प्रस्तुत किया जाता है कि हालाँकि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** का मामला साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 पर ध्यान नहीं देता है या उससे संबंधित नहीं है। यह केवल परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 को नोटिस करता है और उससे संबंधित है और यह मानता है कि धारा 4 में उल्लिखित "निर्धारित अवधि" शब्द का अर्थ परिसीमा की अवधि है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय इस बात पर ध्यान देने में विफल रहता है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 के तहत निर्धारित परिसीमा की अवधि से संबंधित है जो जहां तक वैधानिक क्षम्य अवधि का संबंध है यह एक रिक्ती बनाती है।

4.6 यह प्रस्तुत किया जाता है कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 पर ध्यान देने में विफल रहने में **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के

मामले में निर्णय साधारण खंड अधिनियम में सन्निहित सिद्धांत की अवहेलना करता है जो अपने अर्थ और प्रयोज्यता में बहुत व्यापक है और परिसीमा अधिनियम की धारा 4 द्वारा बनाई गई रिक्ति को भरने के लिए आवश्यक रूप से बीच में आना चाहिए।

4.7 अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री दीवान ने आगे कहा कि हालांकि "प्राथमिक न्याय" का एक ही सामान्य सिद्धांत दोनों अधिनियमों की दोनों धाराओं में सन्निहित है, लेकिन परिसीमा अधिनियम, 1963 और साधारण खंड अधिनियम, 1897 के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है।

4.8 यह प्रस्तुत किया जाता है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 2(ञ) "परिसीमा की अवधि" को परिभाषित करती है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस प्रकार "निर्धारित अवधि" शब्द का परिसीमा अधिनियम के संदर्भ में एक संकीर्ण अर्थ है वही साधारण खंड अधिनियम में ऐसा कोई प्रतिबंधात्मक परिभाषा खंड नहीं है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वास्तव में साधारण खंडों की धारा 10 की योजना अधिनियम प्रावधान के केवल अवलोकन से स्पष्ट है और इंगित करता है कि इस खंड में *दो निर्धारित अवधियाँ* हैं जो कि (1) वह निर्धारित अवधि जिसके भीतर कुछ करने का निर्देश दिया जाता है या (2) वह निर्धारित अवधि जिसके भीतर कुछ करने की *अनुमति दी जाती है।*

4.9 यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि जिस अवधि में कुछ करने की अनुमति दी जाती है जैसे कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के परंतुक द्वारा प्रदान की गई 30 दिनों की क्षम्य अवधि भी साधारण खंड अधिनियम, 1897 के अर्थ के अंतर्गत एक निर्धारित अवधि है।

4.10 अपीलार्थी की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्याम दीवान ने आगे कहा कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा

10 में सन्निहित सिद्धांत न्याय का एक प्राथमिक अंश है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि साधारण खंड अधिनियम पर 60वीं विधि आयोग रिपोर्ट ने अधिनियम और प्रावधान के पीछे संसदीय इरादे को दोहराया, जो प्राथमिक न्याय प्रदान करता है।

4.11 यह प्रस्तुत किया जाता है कि **(2005) 1 एससीसी** 191 में प्रकाशित **हुडा व अन्य बनाम डॉ. बाबेश्वर कन्हार व अन्य** के मामले में इस न्यायालय ने यह देखा और अभिनिर्धारित किया कि न्याय और समयोचितता के प्रत्येक विचार के लिए आवश्यक है कि स्वीकृत सिद्धांत जो साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को रेखांकित करता है जो उन मामलों में लागू किया जाना चाहिए जहां यह अन्यथा शर्तों में लागू नहीं होता है। यह देखा गया है कि अंतर्निहित सिद्धांत *लेक्स नॉन कोजिट एड इम्पॉसिबिलिया* (विधि किसी व्यक्ति को असंभव कार्य करने के लिए मजबूर नहीं करती है) और एक्टस क्यूरी नेमिनेम ग्रेवाबिट (न्यायालय के कार्य से किसी को हानि नहीं होगी)। यह प्रस्तुत किया जाता है कि **(1996) 1 एससीसी 169** के रूप में प्रकाशित **मनोहर जोशी बनाम नितिन भाऊराव पाटिल और अन्य** के मामले में इस न्यायालय ने यह देखा और अभिनिर्धारित किया कि वादी को अंतिम दिन तक परिसीमा का लाभ उठाने का अधिकार है और उसका एकमात्र दायित्व परिसीमा के अंतिम दिन और उसके बाद प्रत्येक दिन जब तक यह वास्तव में प्रस्तुत नहीं किया जाता है, तब तक मुकदमा/याचिका प्रस्तुत करने में अपनी असमर्थता की व्याख्या करना है।

4.12 यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि यदि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है तो परिसीमा अधिनियम की धारा 4 का लाभ केवल परिसीमा की अवधि के लिए उपलब्ध है और सांविधिक रूप से स्वीकृत क्षम्य अवधि के लिए उपलब्ध नहीं है। साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को रिक्तता को भरने के लिए कदम उठाना चाहिए। यह प्रस्तुत किया जाता है कि कोई भी विपरीत दृष्टिकोण व्यक्तियों

को हुए विलम्ब की क्षमा के लिए 30 दिनों की वैधानिक अवधि के पूर्ण होने से वंचित कर देगा।

4.13 अब जहाँ तक प्रत्यर्थी की ओर से यह तर्क है कि वर्तमान कार्यवाही "कोई भी अधिनियम या कार्यवाही जिस पर परिसीमा अधिनियम लागू होता है" एक गलत तर्क से सम्बंधित है और यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रत्यर्थी ने साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के प्रावधान पर भरोसा करने की मांग की है। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 43(1) के आधार पर यह तर्क देते हुए कि परिसीमा अधिनियम वर्तमान कार्यवाहियों पर लागू होता है, यह प्रस्तुत किया जाता है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 43(1) में केवल यह कहा गया है कि "परिसीमा अधिनियम, 1963 मध्यस्थता पर लागू होगा जैसा कि यह न्यायालय की कार्यवाहियों पर लागू होता है|" यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसकी व्याख्या इस अर्थ में नहीं की जा सकती है कि परिसीमा अधिनियम, पूरी तरह से मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत कार्यवाही पर लागू होता है और वर्तमान कार्यवाही एक अधिनियम या कार्यवाही है जिस पर परिसीमा अधिनियम लागू होता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वास्तव में, परिसीमा के मामलों में मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 एक पूर्ण संहिता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि एक ओर प्रत्यर्थी का पूरा मामला यह है कि परिसीमा अधिनियम का लाभ विशेष रूप से परिसीमा अधिनियम की धारा 4 को तत्काल मामले में क्षम्य अवधि को नहीं दिया जा सकता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए एक ओर प्रत्यर्थी तर्क दे रहा है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 4 के साथ-साथ परिसीमा अधिनियम की धारा 5 का लाभ मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत क्षम्य अवधि पर लागू नहीं होता है अर्थात वर्तमान कार्यवाही में परिसीमा अधिनियम का कोई प्रयोज्य नहीं है और साथ ही प्रत्यर्थी तर्क दे रहा है कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का लाभ अपीलार्थी को नहीं दिया जा सकता है क्योंकि वर्तमान कार्यवाही "कोई भी कार्य या कार्यवाही जिसके लिए भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1877 लागू होता है" वाक्यांश के दायरे में आती है।

4.14 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री दीवान द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि (2021) 2 एससीसी 317 में प्रकाशित **सगुफा अहमद और अन्य बनाम अपर असम पॉलीवुड प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य** के मामले पर किए गए भरोसे को निम्नलिखित दो कारणों से गलत रूप से धारण किया गया है:-

(1) **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के मामले में साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का संदर्भ उत्तम रूप में स्पर्शरेखीय है;

(2) **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के तथ्य विषयगत मामले से स्पष्ट रूप से अलग है। उस मामले में, अपीलार्थीगण ने माननीय एन.सी.एल.टी. के आदेश के खिलाफ अपील दायर करने के लिए विवेकाधीन अवधि समाप्त होने के 5 महीने बाद तक प्रतीक्षा की थी। वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता- यहाँ पर अपीलार्थी द्वारा कोई अनुचित विलम्ब नहीं हुआ था। याचिकाकर्ता-अपीलार्थी ने माननीय न्यायालय के दुबारा खुलने के दिन ही धारा 34 के तहत याचिका दायर की थी।

4.15 यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस न्यायालय ने अपने दिनांक 08.03.2021 के आदेश में *स्वप्रेरणा* रिट याचिका (सिविल) सं. 3/2020 में 'परिसीमा अवधि' और 'अनुग्रह अवधि' के बीच कृत्रिम अंतर को शांत कर दिया है जिसमें उसने कोविड-19 के कारण छूट का लाभ परिसीमा अवधि के साथ-साथ क्षम्य अवधि तक बढ़ा दिया है।

4.16 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री दीवान द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया जाता है कि मध्यस्थता अधिनियम में प्रदान की गई परिसीमा अवधि और वैधानिक अनुग्रह अवधि/क्षम्य अवधि का लक्ष्य और उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि जो पक्षकर अपने अधिकारों पर कार्य नहीं करते हैं और न्यायालय में देर से आते हैं उन्हें पहले से चल रही कार्यवाहियों को छेड़ने की अनुमति नहीं है। यह प्रस्तुत

किया जाता है कि वर्तमान मामले में अपीलार्थी ने पूर्णतः मेहनती होते हुए और दुबारा खुलने के दिन ही विद्वान विचारण न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को इस तरह की स्थिति को ठीक से संबोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया है और केवल इसलिए कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 का लाभ किसी मामले में उपलब्ध नहीं है तो साधारण खंड अधिनियम, 1897 के आवेदन को सिर्फ इसी तथ्य के आधार पर वास्तव में बाहर नहीं किया जाना चाहिए।

4.17 यह प्रस्तुत किया जाता है कि अपीलार्थी एक क्रिशिविशेषज्ञों की समिति है और प्रत्यर्थी द्वारा अपने दायित्वों को पूरा न करने के कारण नुकसान झेलने के बावजूद अपीलार्थी के मामले की सुनवाई गुणागुण के आधार पर कभी नहीं की गई है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए वर्तमान मामले में अपीलार्थी का पक्ष न लेना और साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के लाभ से इनकार करना (इसमें दर्ज न्याय के प्राथमिक नियम के साथ) न्याय की गंभीर विफलता का कारण बनेगा।

उपरोक्त प्रस्तुतियाँ करते हुए यह प्रार्थना की जाती है कि विद्वान विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त कर दिया जाए और मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन को दायर करने में हुए विलम्ब को क्षमा किया जाए और विद्वान विचारण न्यायालय को योग्यता के आधार पर मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन पर सुनवाई करने का निर्देश दिया जाए और अपीलार्थी को योग्यता के आधार पर अपना मामला रखने का अवसर दिया जाए।

5. प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ध्रुव मेहता ने वर्तमान अपील का प्रबल्तापुर्वक विरोध किया है।

5.1 यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान मामले में अपीलार्थी ने स्वीकार किया कि दिनांक 24.08.2016 पर अधिनिर्णय प्राप्त किया। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के अनुसार अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए 3 महीने की "निर्धारित अवधि" दिनांक 24.11.2016 पर समाप्त हो गई थी और मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के तहत 30 दिनों की आगे की अवधि दिनांक 24.12.2016 पर समाप्त हो गई थी। कि विद्वान विचारण न्यायालय दिनांक 19.12.2016 से 01.01.2017 के बीच शीतकालीन अवकाश पर था। अपीलार्थी ने विलम्ब को क्षमा करने के लिए एक आवेदन के साथ दुबारा खुलने के दिन अर्थात 02.01.2007 पर विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 को दायर किया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने क्षमा के लिए अपीलार्थी के आवेदन की पोषणीयता और गुणागुण दोनों पर विचार करने के बाद पाया है कि आवेदन चलाने योग्य नहीं था और यह भी कि अपीलार्थी द्वारा कोई पर्याप्त कारण नहीं दिखाया गया था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के आदेश को बरकरार रखा है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत "निर्धारित अवधि" से परे होने के कारण पोषणीय नहीं थी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए वर्तमान मामले में निम्नलिखित प्रश्न विचार के लिए उत्पन्न होते हैं।

(1) क्या परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 का लाभ किसी पक्षकार को तब उपलब्ध है जब मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत याचिका दायर करने के लिए 3 महीने की "निर्धारित अवधि" से पहले ही समाप्त हो चुकी है और धारा 34(3) के परंतुक के तहत 30 दिनों की विवेकाधीन अवधि उस दिन आती है जब न्यायालय बंद होता है?

(2) क्या साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का लाभ ऐसी परिस्थितियों में किसी पक्षकार को अलग से उपलब्ध है?

5.2 अब, जहाँ तक सीमा अधिनियम की धारा 4 के लागू होने का संबंध है यह विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ध्रुव मेहता द्वारा प्रबलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 4 मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के तहत विचार की गई 30 दिनों की विवेकाधीन क्षमादान अवधि पर लागू नहीं होगी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) में कहा गया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(1) के तहत मध्यस्थम अधिनिर्णय को चुनौती देने वाला आवेदन उस तारीख से तीन महीने की अवधि के बाद नहीं किया जा सकता है जिस दिन आवेदन करने वाले पक्षकार को मध्यस्थम अधिनिर्णय प्राप्त हुआ था। धारा 34(3) का *परंतुक* न्यायालय को पर्याप्त कारण दिखाए जाने पर धारा 34(1) के तहत आवेदन दायर करने में हुए विलंभ को अधिकतम केवल 30 दिनों की अवधि के लिए माफ करने के लिए सीमित शक्तियां देता है परन्तु उसके बाद नहीं। इसे प्रस्तुत किया जाता **(2001) 8 एससीसी 470 (अनुच्छेद 10,12,14 और 16)** में प्रकाशित **भारत संघ बनाम लोकप्रिय निर्माण कंपनी** के मामले में इस न्यायालय ने पाया गया है कि धारा 34(3) के परंतुक में "लेकिन उसके बाद नहीं" शब्दों का उपयोग सीमा अधिनियम की खंड 29(2) के अर्थ के भीतर एक स्पष्ट बहिष्करण के बराबर है। इसलिए, न्यायालय को 30 दिनों से अधिक के विलम्ब को क्षमा करने का कोई विवेकाधिकार नहीं होगा। इसलिए, परिसीमा अधिनियम की धारा 5 को मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(1) पर लागू नहीं माना गया था।

5.3 यह प्रस्तुत किया जाता है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 4 केवल तभी लागू होती है जब "निर्धारित अवधि" की अंतिम तिथि उस दिन पर आती है जिस दिन न्यायालय बंद होता है। यह प्रस्तुत

किया जाता है कि "निर्धारित अवधि" शब्द को परिसीमा अधिनियम की धारा 2(ञ) में परिसीमा अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार गणना की गई परिसीमा की अवधि के रूप में परिभाषित किया गया है।

5.4 यह प्रस्तुत किया जाता है कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** (अनुच्छेद 10 से 14) के मामले में इस न्यायालय ने निर्णय दिया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत "निर्धारित अवधि" तीन महीने है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि मध्यस्थता अधिनियम की खंड 34(3) के परंतुक में उल्लिखित 30 दिनों की "आगे की अवधि" को "सीमा की अवधि" नहीं कहा जा सकता है और इसलिए, मध्यस्थता पुरस्कार को रद्द करने के लिए आवेदन करने के उद्देश्यों के लिए "निर्धारित अवधि" नहीं होगी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस प्रकार, उक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि सीमा अधिनियम की खंड 4 जो केवल "निर्धारित अवधि" पर लागू होती है, तब लागू नहीं होती है जब परिसीमा अधिनियम की धारा 34(3) में उल्लिखित 30 दिनों की "आगे की अवधि" की अंतिम तिथि उस दिन आती है जिस दिन न्यायालय बंद होता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** मामले के तथ्य वर्तमान मामले के तथ्यों के समान हैं। यह प्रस्तुत किया जाता है कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय की पुष्टि इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** (पैरा 20-22) के मामले में की है।

5.5 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ध्रुव मेहता द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया जाता है कि सीमा अधिनियम की खंड 4 के सही आवेदन के परिणामस्वरूप एक याचिका पर अधिकार के रूप में विचार किया जाएगा, बिना किसी पक्ष को विलम्ब की क्षमा की मांग की जाएगी, क्योंकि यह केवल उन याचिकाओं पर लागू होती है जो अन्यथा

"निर्धारित अवधि" के भीतर होतीं, लेकिन इस अवधि के भीतर इसकी प्रस्तुति को न्यायालय के बंद होने के कारण रोक दिया गया है। हालांकि, दूसरी ओर, यह एक विलंबित याचिका पर लागू नहीं हो सकता है, जहां किसी भी स्थिति में, याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार पर्याप्त कारण दिखाए जाने और विलम्ब की क्षमा की मांग के अधीन है।

5.6 अब, जहाँ तक अपीलार्थी की ओर से यह निवेदन कि **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय एक अच्छा कानून नहीं है या अलग करने योग्य है, यह प्रस्तुत किया जाता है कि **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय सही कानून निर्धारित करता है और "आगे की अवधि के भीतर विलम्ब को क्षमा करने" की व्याख्या पर पूरे बल के साथ लागू होगा।

5.7 यह प्रस्तुत किया जाता है कि **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के मामले में कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 421(3) के संदर्भ में निर्णय, जो अपील दायर करने के लिए 45 दिनों की निर्धारित अवधि प्रदान करता है, और अपीलीय न्यायाधिकरण को 45 दिनों से अधिक की "आगे की अवधि" के भीतर विलम्ब को क्षमा करने का अधिकार देता है। इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने अपीलार्थियों के इस तर्क को खारिज कर दिया कि इस न्यायालय के आदेश का लाभ दिनांक (2020) 19 एससीसी 10 में सीमा विस्तार के लिए संज्ञान, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि दिनांक (2020) 19 एससीसी 10 के आदेश के तहत, जिसे बढ़ाया गया था, केवल "सीमा की अवधि" थी, न कि वह अवधि जिसके लिए अधिनियम द्वारा प्रदत्त विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए विलम्ब को क्षमा किया जा सकता है, उन्हें दिया जा सकता है।

5.8 यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस प्रकार, **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के मामले में, इस न्यायालय ने **असम शहरी (पूर्वोक्त)** की पुष्टि करते हुए कहा है कि सीमा अधिनियम की खंड 4 में दिखाई

देने वाली "निर्धारित अवधि" का अर्थ सीमा की अवधि के अलावा और कुछ नहीं माना जा सकता है। "निर्धारित अवधि" से परे की कोई भी अवधि जिसके दौरान न्यायालय या न्यायाधिकरण को किसी व्यक्ति को कार्यवाही शुरू करने की अनुमति देने का विवेकाधिकार है, को "निर्धारित अवधि" नहीं माना जा सकता है।

5.9 अब, जहाँ तक अपीलार्थी की ओर से यह निवेदन है कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय का प्रभाव उन स्थितियों में पक्षकारों को क्षमा के लिए अपना आवेदन दायर करने के अधिकार से वंचित करने का है जहाँ छुट्टी के दौरान विवेकाधीन अवधि समाप्त हो जाती है और ऐसी व्याख्या गलत थी क्योंकि यह पक्षकारों को "आकस्मिक परिस्थिति" के भरोसे छोड़ता है और यह प्रस्तुत किया जाता है कि ऐसा निवेदन मान्य नहीं है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि न्यायालय के अवकाशों को पहले से ही अधिसूचित किया जाता है और यह एक आकस्मिक परिस्थिति के लिए जिम्मेदार नहीं होगा जैसा कि आरोप लगाया गया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि अधिनिर्णय की प्राप्ति की तारीख पर पक्षकार को मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत परिसीमा अवधि के बारे में अच्छी तरह से पता होगा और उसे मेहनत कर अपने अधिकार को सुरक्षित करना होगा। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान मामले में दिनांक 24.08.2016 पर अधिनिर्णय प्राप्त करने के बाद अपीलार्थी के पास "निर्धारित अवधि" की समाप्ति के बाद और विचारण न्यायालय की शीतकालीन अवकाश शुरू होने से पहले 25 दिनों की आगे अवधि और थी। हालांकि, याचिकाकर्ता-अपीलार्थी ने इस समय के दौरान अपनी याचिका दायर नहीं करने का फैसला किया और इसलिए अपरिहार्य परिणामों से पीड़ित हुए।

5.10 यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत अधिकार अत्यंत सीमित आधार पर किसी अधिनिर्णय को चुनौती देने का एक प्रतिबंधित अधिकार है।

मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान में परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत न्यायालय की सामान्य शक्ति को बाहर रखा गया है और खंड 34 के तहत याचिका प्रस्तुत करने के लिए एक सख्त समय सीमा लागू की गई है।ऐसी परिस्थितियों में, अपीलार्थी के तर्क की स्वीकृति का प्रभाव खंड 34 के तहत याचिका को विलम्ब से प्रस्तुति के लिए अनुचित रूप से विस्तारित समय अवधि (वैधानिक 30 दिन की विवेकाधीन अवधि से परे) प्रदान करने का होगा, जो मध्यस्थता अधिनियम की योजना और इरादे के विपरीत होगा।

5.11 अब जहाँ तक अपीलार्थी के मामले के अनुसार सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 की प्रयोज्यता का संबंध है यह प्रबलतापूर्वक प्रस्तुत किया जाता है कि इस तरह का विवाद सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के परंतुक के आलोक में असमर्थनीय है जो विशेष रूप से इस खंड को किसी भी अधिनियम या कार्यवाही पर लागू करने से बाहर करता है जिस पर भारतीय परिसीमा अधिनियम लागू होता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि 1877 अधिनियम के संदर्भ को अब सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 8 को देखते हुए परिसीमा अधिनियम, 1963 के संदर्भ के रूप में पढ़ना होगा। यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह अब एकीकृत नहीं है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 मध्यस्थता अधिनियम की धारा 41(3) के आलोक में मध्यस्थता से उत्पन्न होने वाली मध्यस्थताओं और न्यायालय की कार्यवाही पर लागू होता है। **(2021) 6 एससीसी 460** में प्रकाशित **महाराष्ट्र राज्य बनाम बोर्स ब्रदर्स इंजीनियर्स एंड कॉन्ट्रैक्टर्स प्राइवेट लिमिटेड** और **(2008) 7 एससीसी 169** में प्रकाशित **कॉन्सौलिडेटेड इंजीनियरिंग इंटरप्राइजेज बनाम प्रमुख सचिव, सिंचाई विभाग और अन्य** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया गया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए मध्यस्थता अधिनियम (न्यायालय और मध्यस्थता दोनों में) के तहत कार्यवाही पर लागू परिसीमा

अधिनियम, 1963 के आवेदन के आलोक में सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 को विशेष रूप से बाहर रखा गया है और इसलिए अपीलार्थी द्वारा इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।

5.12 यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस न्यायालय ने **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** में अन्यथा भी यह अभिनिर्धारित किया है कि सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10(1) का आधार बनाने वाले सिद्धांत को भी परिसीमा अधिनियम की धारा 4 में स्थान मिलता है। इसलिए, जब मध्यस्थता अधिनियम की धारा 4 का लाभ उपलब्ध नहीं होता है तो अपीलार्थी सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का सहारा नहीं ले सकता है जो उसी सिद्धांत का मूर्त रूप है।

5.13 यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 4 की तरह सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 में भी "निर्धारित अवधि" शब्द का उपयोग किया गया है। सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 में प्रावधान है कि जहां कोई कार्य एक निश्चित दिन पर करने का निर्देश दिया जाता है या किसी न्यायालय या कार्यालय में निर्धारित अवधि के भीतर कोई कार्यवाही करने की अनुमति दी जाती है और यदि न्यायालय या कार्यालय उस निश्चित दिन या निर्धारित अवधि के अंतिम दिन बंद रहता है तो इसे अगले कार्य दिवस पर किया या उसका संज्ञान लिया जा सकता है। तदनुसार, यदि सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 लागू होनी थी तो "निर्धारित अवधि" शब्द का वही अर्थ दिया जाना चाहिए जो परिसीमा अधिनियम में है। इस प्रकार, सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 भी मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत तीन महीने की निर्धारित अवधि के लिए ही लागू होगी, न कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के तहत 30 दिनों की विवेकाधीन अवधि के लिए।

उपरोक्त प्रस्तुतियाँ करते हुए और इस न्यायालय का **असम शहरी (पूर्वोक्त)** और **सगुफा अहमद (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय पर भरोसा करते हुए वर्तमान अपील को खारिज करने की प्रार्थना की जाती है|

6. संबंधित पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद इस न्यायालय के विचार के लिए एक संक्षिप्त प्रश्न यह पूछा जाता है कि क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विद्वान विचारण न्यायालय को मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत आवेदन को दायर करने में हुए विलम्ब को क्षमा नहीं करने में उचित ठहराया गया था जो 120 दिनों की समाप्ति के बाद दायर किया गया था लेकिन शीतकालीन/क्रिसमस के अवकाश के पश्चात् फिर से खुलने के पहले दिन दायर किया गया था और ऐसे मामले में जहां मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत 30 दिनों का विलम्ब क्षमा योग्य अवधि शीतकालीन/क्रिसमस की अवकाश के दौरान पड़ी थी? यह प्रश्न मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में परिसीमा की धारा 4 और सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के लागू होने के संबंध में है।

इसलिए, वर्तमान अपील में केंद्रीय प्रश्न यह है कि क्या 30 दिनों की क्षमा योग्य अवधि का अंतिम दिन (मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) के तहत) अवकाश पर आता है या न्यायालय के अवकाश के दौरान पड़ता है तो क्या सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का लाभ उपलब्ध होगा?

7. उपरोक्त मुद्दों/प्रश्नों पर विचार करते समय मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 का उल्लेख किया जाना आवश्यक है जो निम्नानुसार है:-

> *"34. मध्यस्थता अधिनिर्णय को अपास्त करने हेतु आवेदन।- (3) अपास्त करने के लिए आवेदन जिस*

दिन वह आवेदन करने वाले पक्ष को मध्यस्थता अधिनिर्णय प्राप्त हुआ था उस तारीख से तीन महीनों के बाद नहीं किया जा सकता है या, यदि धारा 33 के तहत कोई अनुरोध किया गया था, उस तारीख से जिससे मध्यस्थता अधिकरण द्वारा उस अनुरोध का निपटान किया गया था:-

बशर्ते कि यदि न्यायालय संतुष्ट हो कि आवेदक को तीन महीने की उक्त अवधि के भीतर आवेदन करने से पर्याप्त कारण से रोका गया था, तो वह तीस दिनों की आगे की अवधि के भीतर आवेदन पर विचार कर सकता है, लेकिन उसके बाद नहीं।"

भारतीय परिसीमा अधिनियम और सामान्य खंड अधिनियम, 1897 के प्रासंगिक प्रावधानों को भी संदर्भित करने की आवश्यकता है जो निम्नानुसार है:-

"2.(ञ) 'परिसीमा अवधि' (जिसका अर्थ है अनुसूची द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन के मुकदमा निर्धारित परिसीमा अवधि, और 'निर्धारित अवधि' का अर्थ है इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार संगणित परिसीमा अवधि;

*"**4. निर्धारित अवधि की समाप्ति जब न्यायालय बंद हो।**- कहाँ? किसी भी वाद, अपील या आवेदन के मुकदमा निर्धारित अवधि उस दिन समाप्त हो जाती है जब न्यायालय बंद हो जाता है, वाद, अपील या आवेदन उस दिन किया जा सकता है जब न्यायालय फिर से खुलता है।*

स्पष्टीकरण- एक न्यायालय को इस धारा के अर्थ के भीतर किसी भी दिन बंद माना जाएगा यदि वह अपने सामान्य कार्य के घंटों के किसी भी हिस्से के दौरान उस दिन बंद रहती है।"

<u>"सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10</u>

10. समय की गणना।- (1) जहां, इस अधिनियम के प्रारंभ के बाद बनाए गए किसी भी 47 (केंद्रीय अधिनियम) या विनियम द्वारा, किसी कार्य या कार्यवाही को किसी निश्चित दिन या निर्धारित अवधि के भीतर किसी न्यायालय या कार्यालय में करने या लेने का निर्देश दिया जाता है या अनुमति दी जाती है, तो, यदि न्यायालय या कार्यालय उस दिन या निर्धारित अवधि के अंतिम दिन बंद हो जाता है, तो कार्य या कार्यवाही को नियत समय में किया गया या लिया गया माना जाएगा यदि यह अगले दिन किया जाता है या लिया जाता है, जिसके बाद न्यायालय या कार्यालय खुला रहता हैः

बशर्ते कि इस खंड की कोई बात किसी ऐसे अधिनियम या कार्यवाही पर लागू नहीं होगी जिस पर भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1877, 48 लागू होता है।

(2) यह धारा जनवरी, 1887 के चौदहवें दिन या उसके बाद बनाए गए सभी 49 (केंद्रीय अधिनियमों) और विनियमों पर भी लागू होती है।"

(ज़ोर दिया गया)"

7.1 मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) और परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 2(ञ) और 4 इस न्यायालय के समक्ष **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में विचार के लिए थीं। यहां तक कि वर्तमान अपील में उठाया गया मुद्दा भी **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया। उपरोक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने उपरोक्त प्रावधानों की व्याख्या की और विशेष रूप से यह कहा और अभिनिर्धारित किया कि जिस अवधि के दौरान न्यायालय बंद है, उसके छूट का लाभ केवल तभी उपलब्ध है जब अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन 'परिसीमा की निर्धारित अवधि' के भीतर दायर किया जाता है और यह उस अवधि के संबंध में उपलब्ध नहीं है जिसे न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए बढ़ा सकता है। ऐसा मानते हुए,

इस न्यायालय ने (2010) 4 एससीसी 518 में प्रकाशित **पौपुलर कंस्ट्रक्शन कं. (पूर्वोक्त) और महाराष्ट्र राज्य बनाम हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कं. लिमि.** के मामले में पहले के निर्णयों पर विचार किया और अनुच्छेद 6 से 9 में निम्नानुसार अवलोकन और अभिनिर्धारित किया है:-

> *"6. 1996 अधिनियम की धारा 34(3) में प्रावधान है कि मध्यस्थता अधिनिर्णय की प्राप्ति के तीन महीने के भीतर एक अधिनिर्णय को अपास्त करने के लिए आवेदन किया जा सकता है। धारा 34 की उप-खंड (3) का अनुसरण करने वाले परंतुक में यह प्रावधान है कि पर्याप्त कारण पर दिखाया जा रहा है,* न्यायालय तीन महीने की अवधि के बाद और 30 दिनों की आगे की अवधि के भीतर अधिनिर्णय को रद्ध करने के लिए आवेदन पर विचार कर सकती है, लेकिन उसके बाद नहीं।
>
> 7. पौपुलर कंस्ट्रक्शन कं.[1] में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि धारा 34(3) में उल्लिखित अवधि से आगे दायर किए गए अधिनिर्णय को रद्ध करने के लिए एक आवेदन 1996 अधिनियम की धारा 34(1) के तहत आवश्यक उप-खंड (3) के अनुसार एक आवेदन नहीं होगा और 1963 अधिनियम की धारा 5 का इस तरह के आवेदन पर कोई आवेदन नहीं है। रिपोर्ट के पैरा 12 में, यह लोकप्रिय निर्माण कंपनी 1 में इस प्रकार आयोजित किया गया थाः (एससीसी पीपी.474-75)
>
> > "12. जहाँ तक 1996 के अधिनियम की धारा 34 की भाषा का संबंध है, महत्वपूर्ण शब्दों का उपयोग उप-खंड (3) के परंतुक में लेकिन उसके बाद नहीं किया जाता है। हमारी राय में, यह वाक्यांश परिसीमा अधिनियम की धारा 29(2) के अर्थ के भीतर एक स्पष्ट छूट के बराबर होगा, और इसलिए उस अधिनियम की धारा 5 का प्रयो वर्जित करेगा। संसद को और आगे जाने की

जरूरत नहीं पड़ेगी। यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि न्यायालय परंतुक के तहत विस्तारित अवधि से परे पुरस्कार को रद्ध करने के लिए एक आवेदन पर विचार कर सकता है जिसमे वाक्यांश हो लेकिन उसके बाद नहीं पूरी तरह से अनुचित बना देगा। व्याख्या का कोई भी सिद्धांत इस तरह के परिणाम को उचित नहीं ठहराएगा।

8. हाल ही में, *महाराष्ट्र राज्य बनाम हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड*[2] मामले में, इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने हममें से एक (न्या., आर.एम. लोढ़ा) द्वारा बोलते हुए धारा 34(3) के परंतुक में प्रदान की गई अवधि के विस्तार की परिसीमा की अनिवार्य प्रकृति पर जोर दिया और कहा कि 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत मध्यस्थता अधिनिर्णय को अपास्त करने के लिए एक आवेदन धारा 34 की उप-खंड (3) के तहत निर्धारित समय के भीतर किया जाना चाहिए अर्थात तीन महीने के भीतर और पर्याप्त कारण दिखाए जाने पर 30 दिनों की अतिरिक्त अवधि और उसके बाद नहीं।

9. 1996 के अधिनियम की धारा 43(1) में प्रावधान है कि 1963 का अधिनियम मध्यस्थता पर लागू होगा जैसा कि यह न्यायालय की कार्यवाही पर लागू होता है। इस प्रकार 1963 का अधिनियम 1996 के अधिनियम के अंतर्गत आने वाले मध्यस्थता के मामलों पर लागू होता है सिवाय इसके कि 1996 के अधिनियम की धारा 34(3) में निहित स्पष्ट प्रावधान के आधार पर

इसकी प्रयोज्यता को इस हद तक बाहर रखा गया है।

इस न्यायालय से पहले वर्तमान मामले की तरह ही तथ्य मौजूद थे। इस न्यायालय के समक्ष मामले में, मध्यस्थता अधिनिर्णय अपीलार्थियों द्वारा 26.08.2003 पर प्राप्त किए गए थे। मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए कोई आवेदन उसकी प्राप्ति के तीन महीने बीतने से पहले नहीं किया गया था। अधिनिर्णय की प्राप्ति की तारीख से तीन महीने की अवधि 26.11.2003 पर समाप्त हो गई। जिला न्यायालय में 25.12.2003 से 01.01.2004 तक की अवधि के लिए क्रिसमस का अवकाश था। न्यायालय के फिर से खुलने पर अर्थात 02.01.2004 पर, अपीलकर्ताओं ने मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन किया। उपरोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए और उसके बाद भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 2(ज) और 4 पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने अनुच्छेद 11 से 15 में निम्नलिखित रूप में अवलोकन कर अभिनिर्धारित किया व निष्कर्ष निकाला:-

> "11. इसलिए, हमारे निर्धारण के लिए जो प्रश्न आता है वह यह है कि क्या अपीलार्थी उपरोक्त तथ्यों में 1963 के अधिनियम की धारा 4 के तहत समय के विस्तारण के हकदार हैं?
>
> 12. 1963 के अधिनियम की धारा 4 निम्नानुसार है:-
>
> **"4. निर्धारित अवधि की समाप्ति जब न्यायालय बंद हो।**— जहाँ किसी भी वाद, अपील या आवेदन के मुकदमे की निर्धारित अवधि

उस दिन समाप्त हो जाती है जब न्यायालय बंद हो जाता है, वाद, अपील या आवेदन उस दिन किया जा सकता है जब न्यायालय फिर से खुलता है।

स्पष्टीकरण- एक न्यायलय को इस खंड के अर्थ के भीतर किसी भी दिन बंद माना जाएगा यदि वह अपने सामान्य कार्य घंटों के किसी भी हिस्से के दौरान उस दिन बंद रहती है।"

उपरोक्त खंड एक पक्ष को मुकदमा दायर करने, अपील करने या उस दिन आवेदन करने में सक्षम बनाती है जिस दिन न्यायालय फिर से खुलती है जहां किसी मुकदमे, अपील या आवेदन के मुकदमा निर्धारित अवधि उस दिन समाप्त हो जाती है जब न्यायालय बंद होती है।

13. 1963 के अधिनियम की धारा 4 में महत्वपूर्ण शब्द निर्धारित अवधि हैं। इन शब्दों का क्या अर्थ है?

14. 1963 के अधिनियम की खंड 2(ञ) में परिभाषित किया गया है:-

"2(ञ) 'परिसीमा अवधि' [जिसका अर्थ है अनुसूची द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन के मुकदमा निर्धारित परिसीमा अवधि, और 'निर्धारित अवधि' का अर्थ है इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार संगणित परिसीमा अवधि।

1963 के अधिनियम की धारा 2(ञ) को जब 1996 के अधिनियम की धारा 34(3) के संदर्भ में पढ़ा जाता है, तो यह पूरी तरह से स्पष्ट हो जाता है कि मध्यस्थता अधिनिर्णय को अपास्त करने के लिए आवेदन करने की निर्धारित अवधि तीन महीने है। 1996 के अधिनियम की धारा 34 की उप-खंड (3) के बाद आने वाले परंतुक में उल्लिखित 30 दिनों की अवधि परिसीमा की अवधि नहीं है और इसलिए, मध्यस्थता अधिनिर्णय को अलग करने के लिए आवेदन करने के उद्देश्यों के लिए निर्धारित अवधि नहीं है। तीन महीने से

अधिक की 30 दिनों की अवधि, जिसे न्यायालय 1996 के अधिनियम की धारा 34 की उप-खंड (3) में संलग्न परंतुक के तहत पर्याप्त कारण दिखाए जाने पर बढ़ा सकता है, परिसीमा की अवधि या दूसरे शब्दों में, निर्धारित अवधि नहीं है, हमारी राय में, 1963 के अधिनियम की धारा 4 वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर बिल्कुल भी आकर्षित नहीं है।

15. इस प्रकार देखा गया कि अपीलकर्ताओं द्वारा 2-1-2004 को मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए किए गए आवेदन खारिज किए जाने योग्य थे और जिला न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी द्वारा समय-बाधित के रूप में खारिज कर दिए गए थे।"

इसलिए, इस प्रकार वर्तमान अपील में शामिल प्रश्न का उत्तर अपीलकर्ता के खिलाफ स्पष्ट रूप से दिया जाता है और उक्त मुद्दा समग्र नहीं है।

8. अब, जहाँ तक अपीलकर्ता की ओर से यह निवेदन है कि मध्यस्थता अधिनियम के तहत कार्यवाही पर परिसीमा अधिनियम लागू नहीं होगा, उपरोक्त में कोई सार नहीं है। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 43(1) विशेष रूप से प्रदान करती है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 मध्यस्थता पर लागू होगा जैसा कि यह न्यायालय में कार्यवाही पर लागू होता है। तथापि, जैसा कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया गया है परिसीमा अधिनियम, 1963, 1996 के अधिनियम के अंतर्गत आने वाले मध्यस्थता के मामलों पर लागू होगा, सिवाय इसके कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) में निहित स्पष्ट प्रावधान के आधार पर इसकी प्रयोज्यता को इस हद तक बाहर रखा गया है।

8.1 **पौपुलर कंस्ट्रक्शन कंपनी (पूर्वोक्त)** के मामले में, जब परिसीमा अधिनियम की धारा 5 को मध्यस्थता अधिनिर्णय को अपास्त करने के लिए मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत कार्यवाही की सेवा में

लगाया गया था, इस न्यायालय ने कहा है कि मध्यस्थता अधिनियम एक विशेष कानून है और परिसीमा अधिनियम के तहत निर्धारित परिसीमा से अलग परिसीमा की अवधि प्रदान करता है, मध्यस्थता अधिनियम के तहत निर्धारित परिसीमा की अवधि प्रबल होगी और लागू होगी और उस हद तक परिसीमा अधिनियम को बाहर रखा जाएगा। इसके बाद, यह देखा गया और अभिनिर्धारित किया गया कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(3) में उल्लिखित अवधि से आगे दायर किए गए अधिनिर्णय को चुनौती देने वाला आवेदन मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34(1) के तहत आवश्यक उप-खंड (3) के अनुसार आवेदन नहीं होगा।

8.2 **हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमि. (पूर्वोक्त)** के मामले में, वास्तव में इस न्यायालय ने धारा 34(3) के परंतुक में प्रदान की गई अवधि के विस्तार की सीमा की अनिवार्य प्रकृति पर जोर दिया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत मध्यस्थता अधिनिर्णय को अपास्त करने के लिए एक आवेदन धारा 34 की उप-खंड (3) के तहत निर्धारित समय के भीतर किया जाना चाहिए अर्थात तीन महीने के भीतर और पर्याप्त कारण दिखाए जाने पर 30 दिनों की और अवधि के भीतर और उसके बाद नहीं।

9. अब, जहाँ तक अपीलकर्ता की ओर से सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 पर निर्भरता का संबंध है, शुरुआत में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ऐसा विवाद सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के परंतुक के आलोक में असमर्थनीय है, जिसमें विशेष रूप से सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 का प्रयोग शामिल नहीं है। किसी भी अधिनियम या कार्यवाही के लिए जिस पर भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1877 लागू होता है। 1877 के अधिनियम के संदर्भ को अब सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 8 को देखते हुए परिसीमा अधिनियम, 1963 के संदर्भ के रूप में पढ़ना होगा। इसलिए, मध्यस्थता अधिनियम के तहत कार्यवाही के लिए परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुप्रयोग के आलोक में और जब सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 विशेष रूप से किसी

भी अधिनियम या कार्यवाही के लिए धारा 10 की प्रयोज्यता को बाहर करती है, जिस पर भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1963 लागू होता है और परिसीमा अधिनियम की धारा 4 के साथ पठित धारा 2(ञ) के तहत परिभाषित सीमा की अवधि की परिभाषा के आलोक में और जैसा कि **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया गया है, उस अवधि के छूट का लाभ तब उपलब्ध होगा जब अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन सीमा की निर्धारित अवधि के भीतर दायर किया जाता है और न्यायालय द्वारा अपने विवेक का प्रयोग करते हुए विस्तारित अवधि के संबंध में उपलब्ध नहीं होगा।

10. अब, जहाँ तक **(2021) 5 एससीसी** 321 में प्रकाशित **श्रीदेवी दतला बनाम भारत संघ** के मामले में इस निर्णय पर अपीलकर्ता की ओर से निर्भर किया गया है से संबंध है शुरुआत में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय पर ध्यान नहीं दिया है और निर्धारित अवधि और विवेकाधीन क्षम्य अवधि के बीच अंतर पर कोई चर्चा नहीं हुई है। दूसरी ओर, **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय का बाध्यकारी निर्णय सीधे बिंदु पर है।

11. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर बताए गए कारणों से **असम शहरी (पूर्वोक्त)** के मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को लागू करते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय और विद्वान तृतीय अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश, विजयपुर ने मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत आवेदन को प्राथमिकता देने में हुए विलम्ब को क्षमा करने से इनकार करने में कोई त्रुटि की है, जो मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34(3) के तहत निर्धारित अवधि से अधिक थी। इन परिस्थितियों में, वर्तमान अपील खारिज किए जाने के योग्य है और तदनुसार खारिज की जाती है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

दिव्या पांडे
(सहायकः शेवाली मोंगा, एलसीआरए)

याचिका खारिज कर दी गई।

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*